नाजिम हिकमत की कविता

तुम्हारे हाथ और उनके झूठ के बारे में
तुम्हारे हाथ
पत्थरों की तरह संगीन।
जेल में गाये गये तमाम गीतों की तरह मनहूस,
बोझ ढोनेवाले जानवरों की तरहअनाड़ी, सख्त
और भूखे बच्चों के चेहरों की तरह नाराज हैं।
मधुमक्खियों की तरह कुशल और सहनशील,
दूध से भरी छातीयों की तरह भरपूर,
कुदरत की तरह दिलेर,
और अपनी खुरदरी खाल में
दोस्ताना अहसास छुपाये तुम्हारे हाथ।
यह दुनिया बैल के सिंग पर नहीं टिकी है,
तुम्हारे हाथों ने सम्भाल रखी है यह दुनिया।
और लोगो, मेरे लोगो,
वे तुम्हें झूठ परोसते रहते हैं,
जबकि तुम भूख से मर रहे हो,
तुम्हें गोस्त और रोटी खिलाने की जरूरत है।
और सफ़ेद कपड़े से ढकी मेज पर एक बार भी
भर पेट खाये बिना ही
तुम छोड़ देते हो यह दुनिया
जिसकी हर डाली पर लदे हुए हैं
बेशुमार फल।
लोगो, मेरे लोगो,
खासकर एशिया के लोगो,
अफ्रीका के लोगो,
निकट पूर्व, मध्य पूर्व, प्रशान्त द्वीप के लोगो,
यानी धरती के सत्तर फीसद लोगो,
अपने हाथों की तरह तुम
बूढ़े और भुलक्कड़ हो,
केवल, अनोखे और जवान हो
अपने हाथों की तरह।
लोगो, मेरे लोगो,
मेरे अमरीकी लोगो, मेरे यूरोपीय लोगो,
तुम फुरतीले, साहसी और
लापरवाह हो अपने हाथों की तरह,
अपने हाथों की तरह जल्दी
राजी हो जानेवाले,
आसान है तुमसे पीछा छुड़ाना।
लोगो, मेरे लोगो,
अगर टीवी और रेडियो झूठ बोलते हैं,
अगर किताबें झूठ बोलती हैं,
अगर दीवार के पोस्टर और अखबारों
के इश्तहार झूठ बोलते हैं,
अगर परदे पर लड़कियों की
नंगी टांगे झूठ बोलती हैं,
अगर प्रार्थनाएं झूठ बोलती हैं,
अगर लोरियां झूठ बोलती हैं,
अगर सपने झूठ बोलते हैं,
अगर शराबखाने का
साजिन्दा झूठ बोलता है,
अगर मायूसी भरी रात में
चांदनी झूठ बोलती है,
अगर अल्फ़ाज झूठ बोलते हैं
अगर रंग झूठ बोलते हैं,
अगर आवाजें झूठ बोलती हैं,
अगर तुम्हारे हाथों को छोड़कर,
तुम्हारे हाथों के सिवा
हर चीज़ और हर शख्त झूठ बोलता है,
तो यह सारी कवायद तुम्हारे हाथों को
मिट्टी के लोंदे की तरह फरमाबरदार,
अंधेरे की तरह अन्धा,
और कुत्ते की तरहभोंदू
बना देने के लिए है,
ताकि तुम्हारे हाथ घूंसों में,
बगावत में तब्दील न हो जायें,
और इसलिए कि इस नाशवान,
मगर जीने लायक दुनिया में
जहां हम मेहमान हैं इतने कम समय के,
सौदागरों की यह हुकूमत,
यह जुल्म कहीं खत्म न हो जाय।

राजगोपाल का चेहरा, अण्णा का मुखौटा

पेज एक का शेष

इसी तरह के एक और अराजनीतिक हस्ती हैं अण्णा हज़ारे, जो इस यात्रा का मुखैटा बने हैं। वे अपनी ढपली अलग ही बजाते रहे हैं। वे भी कह रहे हैं कि ये आंदोलनकारी लोग नये भूमि अधिग्रहण क़ानून के ख़िलाफ़ मार्च कर रहे हैं जबकि मार्च में शामिल लोग भूमि के क़ानूनी अधिकार व वन सम्पदा के लिये लड़ रहे हैं। इनमें किसान नाम मात्र को ही नज़र आते हैं। अजीब गांधीवादियों से पाला पड़ा है। ऐसा लगता है दोनों ही गांधीवादियों (अण्णा और राजगोपाल) को उन भूमिमालिकों ने 'इस्तेमाल' किया है जो मोदी सरकार के नये भूमि संशोधन क़ानून से अधिग्रहण का मुआवजा कम होने से नाराज हैं। उन्होंने अण्णा की मीडिया छवि और राजगोपाल की भीड़ शक्ति को भुनाने की कोशिश की है। अण्णा को भी ये अच्छा मौका हाथ लगा क्योंकि वहां अपने गांव में पड़े-पड़े उनको कुतिया भी नहीं पूछ रही थी। दिल्ली आते ही पुराने चेले और अब मुख्यमंत्री/उपमुख्यमंत्री उनके चरण चुचकारने आ गये।

इस 'महान' गांधीवादी से कोई पूछनेवाला हो कि भूमि अधिकार जैसे सर्वकालिक व अति राजनीतिक प्रश्न को उठाकर वे अराजनीतिक कैसे हैं और क्यों और राजनीतिक दलों को अपने इस संघर्ष में शामिल नहीं करना चाहते हैं। वैसे आज धन्ना सेठों को भी इतना उपयोगी व्यक्ति कोई नहीं मिलेगा जो न तो जनता को एकजुट होकर संघर्ष करने देता है और न ही उनके संघर्ष का सही मायने में नेतृत्व करने वाले लोग़ों को मंच पर आने देता है। बस सारे कैमरे अण्णा पर फ़ोकस रखो और व्यक्ति पूजा करते रहो। दूसरे गांधीवादी, राजगोपाल नेपथ्य में बैठे एक दो साल में एकाध पैदल यात्रा करवा के 'जन-संघर्ष' की मलाई खा ही रहे हैं। ताज्जुब नहीं कि मोदी सरकार के नुमाइंदों ने भी समझौते का राग अलापने में देर नहीं लगाई है। संसद के अंदर भी विरोधी पक्ष यही तो मांग रहा है कि 2013 के क़ानून को बिना संशोधन के लागू किया जाय। ध्यान रहे कि 2013 में बनाया गया भूमि अधिग्रहण कानून भी भाजपा की सहमती से ही तत्कालीन कांग्रेसी सरकार द्वारा पारित कराया गया था। अब भी ले-दे कर बात वहीं तक ही पहुंचनी है।

जब सत्ता ही देश को ठगने लगे तो...!!!

एक तरफ़ विकास और दूसरी तरफ़ हिन्दुत्व। एक तरफ़ नरेन्द्र मोदी दूसरी तरफ़ राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ। एक तरफ़ संवैधानिक संसदीय राजनीति तो दूसरी तरफ़ हिन्दू राष्ट्र का एलान कर खड़ा हुआ संघ परिवार। और इन सबके लिये दाना-पानी बनता हाशिये पर पड़ा वह तबका, जिसकी पूरी जिन्दगी दो जून की रोटी के लिये खप जाती है। तो अरसे बाद देश की धारा उस मुहाने पर आकर थमी है जहां विकास का विजन और हिन्दुत्व की दृष्टि में कोई अंतर नज़र नहीं आता है। विकास आवारा पूंजी पर टिका है तो हिन्दुत्व भगवा धारण करने पर जा टिका है। इन परिस्थितियों को सिलसिलेवार तरीके से खोलें तो सत्ताधारी होने के मायने भी समझ में आ सकते हैं और जो सवाल संसदीय राजनीति के दायरे में पहली बार जनादेश के साथ उठे हैं, उसकी शून्यता भी नज़र आती है। मसलन मोदी, विकास और पूंजी के दायरे में पहले देश के सच को समझें। यह रास्ता मनमोहन सिंह की अर्थनीति से आगे जाता है।

मनमोहन की मुश्किल सब कुछ बेचने से पहले बाज़ार को ही इतना खुला बनाने की थी, जिसमें पूंजीपतियों की व्यवस्था ही चले लेकिन कांग्रेसी राजनीति साधने के लिये मनरेगा और खाद्य सुरक्षा सरीखी योजनाओं के जरिए एनजीओ सरीखी सरकार दिखानी थी। नरेन्द्र मोदी के लिये बाजार का खुलापन बनना जरूरी नहीं है बल्कि पूंजी को ही बाजार में तब्दील कर विकास की ऐसी चकाचौंध तले सरकार को खड़ा करना है, जिसे देखने वाला इस हद तक लालायित हो जहां उसका अपना वजूद, अपना देश ही बेमानी लगने लगे। यानी ऊर्जा से लेकर इन्फ्रास्ट्रक्चर और हेल्थ, इंश्योरेंस, शिक्षा, रक्षा से लेकर स्वच्छ गंगा तक की किसी भी योजना का आधार देश की जनता नहीं है बल्कि सरकार के करीब खड़े उद्योगपति या कॉरपोरेट के अलावा वह विदेशी पूंजी है जो यह एलान करती है कि उसकी ताकत भारत के भविष्य को बदल सकती है। और बदलते भारत का सपना जगाये विकास की यह व्यवस्था सौ करोड़ जनता को ना तो भागीदार बनाती है और ना ही भागेदारी की कोई व्यवस्था खड़ा करती है। यानी हालात बदलेंगे या बदलने चाहिये, उसमें जनता की भागीदारी वोट देने के साथ ही खत्म हो गयी और अब सरकार की नीतियां भारत को विकसित बनाने की दिशा में देश से बाहर समर्थन चाहती हैं।

बाहरी समर्थन का मतलब है विदेशी निवेश। और विदेशी निवेश का मतलब है देशवासियों तक यह संदेश पहुंचाना कि आगे बढने के लिए सिर्फ़ सरकार कुछ नहीं कर सकती बल्कि जमीन से लेकर खनिज संपदा और जीने के तरीकों से लेकर रोज़गार पाने के उपायों में भी परिवर्तन करना होगा। क्योंकि सरकार तब तक कुछ नहीं कर सकती जब तक देश नहीं बदले। बदलने की इस प्रक्रिया का मतलब है खनिज संपदा की जो लूट मनमोहन सिंह के दौर में नज़र आती थी वह नरेन्द्र मोदी के दौर में नज़र नहीं आयेगी क्योंकि लूट शब्द नीति में बदल दिया जाये तो यह सरकारी मुहर तले विकास की लकीर मानी जाती है। मसलन ज़मीन अधिग्रहण में बदलाव, मज़दूरों के कामकाज और उनकी नौकरी के नियमों में सुधार, पावर सेक्टर के लिये लाइसेंस में बदलाव, खदान देने के तरीकों में बदलाव, सरकारी योजनाओं को पानेवाले कारपोरेट और उद्योगपतियों के नियमों में बदलाव। यहां यह कहा जा सकता है कि बीते दस बरस के दौर में विकास के नाम पर जितने घोटाले, जितनी लूट हुई और राजनीतिक सत्ता का चेहरा जिस तरह जनता को खूंखार लगने लगा उसमें परिवर्तन जरुरी था। लेकिन परिवर्तन के बाद पहला सवाल यही है कि जिस जनता में जो आस बदलाव को लेकर जगी क्या उस बदलाव के तौर तरीकों में जनता को साथ जोड़ना चाहिये या नहीं? या फ़िर जनादेश के दबाव में जनता पहली बार इतनी अलग-थलग हो गयी कि सरकार के हर निर्णय के सामने खड़े होने की औकात ही उसकी नहीं रही और सरकार बिना बंदिश तीस बरस बाद देश के नीतियों को इस अंदाज़ से चलाने, बदलने लगी कि वह जो भी कर रही है वह सही होगा या सही होना चाहिये तो यहीं से एक दूसरा सवाल उसी सत्ता को लेकर खड़ा होता है जिसमें पूर्ण बहुमत कि हर सरकार के सामने यह सवाल हमेशा से रहा है कि देश का वोटिंग पैटर्न उसके पक्ष में रहे जिसमें कभी किसी चुनाव में सत्ता उसके हाथ से ना निकले या सत्ता हमेशा हर राज्य में आती रहे। कांग्रेस का नजरिया हमेशा से ही यही रहा है। इसलिये राजीव गांधी तक कांग्रेस की तूती अगर देश में बोलती रही और राज्यों में कांग्रेस की सत्ता बरकरार रही तो उस दौर के विकास को आज के दौर में उठते सवालों तले तौल कर देख लें। यह बेहद साफ़ लगेगा कि कांग्रेस ने हमेशा अपना विकास किया।

यानी विकास का ऐसा पैमाना नीतियों के तहत विकसित किया, जिससे उसका वोट बैंक बना रहे। चाहे वह आदिवासी हो या मुसलमान। किसान हो या शहरी मध्यमवर्ग। अब इस आइने में बीजेपी या मोदी सरकार को फिट करके देख लें। जो नारे या जो सपना राजीव गांधी के वक्त देश के युवाओं ने देखा उसे नरेन्द्र मोदी चाहे ना जगा पाये हों लेकिन सरकार चलाते हुए जिस वोट बैंक और हमेशा सत्ता में बने रहने के वोट बैंक को बनाने का सवाल है तो बीजेपी के पास हिन्दुत्व का ऐसा मंत्र है जो राष्ट्रीयता के पैमाने से भी आगे निकलकर जनता की आस्था, उसके भरोसे और जीने के तरीके को प्रभावित करता है। लेकिन यह पैमाना कांग्रेस के एनजीओ चेहरे से कहीं ज़्यादा धारदार है। धारदार इसलिये क्योंकि कांग्रेस के सपने पेट-भूख, दो जून की रोज़ी रोटी के सवाल के सामने नतमस्तक हो जाते हैं लेकिन हिन्दुत्व का नजरिया मरने-मारने वाले हालात में जीने से कतराता नहीं है। इसकी बारीकी को समझें तो दो धर्म के लोग़ों के बीच का प्रेम कैसे 'लव जेहाद' में बदलता है और मोदी सरकार की एक मंत्री 'रामजादा' और 'हरामजादा' कहकर समाज को कुदेरती है। फ़िर ताजमहल और गीता का सवाल रोमानियत और आस्था के जरिये संवैधानिक तौर तरीकों पर अंगुली उठाने से नहीं कतराता। और झटके में सत्ता का असल चेहरा वोट बैंक के दायरे को बढाने के लिये या फिर अपनी आस्थाओं को ही राष्ट्रीयता के भाव में बदलने के लिये या कहें राज्य नीति को ही अपनी वैचारिकता तले ढालने का खुला खेल करने से नहीं कतराता। और यह खेल खेला तभी जाता है जब कानून के रखवाले भी खेलने वाले ही हों। यानी सत्ता बदलेगी तो खेल बदलेगा। और इस तरह के सियासी खेल को संविधान या क़ानून का ख़ौफ भी नहीं हो सकता है क्योंकि सत्ता उसी की है। यानी अपने-अपने दायरे में अपराधी कोई तभी होगा जब वह सत्ता में नहीं होगा। याद कीजिये तों कंधमाल में धर्मांतरण के सवाल पर ही ग्राहम स्टेन्स की हत्या और बजरंग दल से जुड़े दारा सिंह का दोषी होना। 2008 में उड़ीसा में ही धर्मांतरण के सवाल पर स्वामी लक्ष्मणानंद की हत्या। ऐसी ही हालत यूपी, बिहार, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ, झारखंड, कर्नाटक, केरल, गुजरात में धर्मांतरण के कितने मामले बीते एक दशक के दौर में सामने आये और कितने क़ानून के दायरे में लाये गये जिनके खिलाफ़ कानूनी कार्रवाई हुई हो। ध्यान दें तो बेहद बारीकी से धर्म और उसके विस्तार में दंगों की राजनीति ने सियासत पर हमला भी बोला है और सियासत को साधा भी है। चाहे 1984 का सिख दंगा हो या 1989 का भागलपुर दंगा। या फ़िर 2002 में गुजरात हो या 2013 में मुजफ़्फ़रनगर के दंगे। असर समाज के टूटन पर पड़ा और आम लोग़ों को रोजी-रोटी पर पड़ा लेकिन साधी सियासत ही गयी। तो फ़िर 2014 में सियासत की कौन सी परिभाषा बदली है। दरअसल पहली बार गुस्से ने सियासत को पलटा है। और विकास को अगर चंद हथेलियों तले गुलाम बनाने की सोच या मजहबी दायरे में समेटने की सोच जगायी जा रही हो तो यह खतरे की घंटी तो है ही। क्योंकि राष्ट्रवाद की चाशनी में कभी आत्मनिर्भर होने का सपना जगाने की बात हो तो कभी हिन्दुत्व को जीने का पैमाना बताकर सत्ता की राहत देने की सौदेबाज़ी का सवाल, हालात और बिगड़ेंगे, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता। और यह हालात आने वाले वक्त में सत्ता की परिभाषा को भी बलद सकते हैं इससे भी इंकार नहीं किया जा सकता।

मज़दूर मोर्चा

नियमित रूप से हर माह की पहली व सोलह तारीख को प्राप्त करने के लिए अपने हॉकर से संपर्क करें। कोई दिक्कत होने पर फ़रीदाबाद के पाठक शर्मा न्यूज एजेंसी से फोन नं 9811159238 पर तथा बल्लभगढ़ के पाठक अरोड़ा न्यूज़ एजेन्सी फोन नं 9811477204, करनाल के पाठक अशोक कुमार जैन, फुटवियर जवाहर मार्किट सदर बाजार से फोन नं 9896436739 पर सम्पर्क करें।

फरीदाबाद में अन्य बिक्री केन्द्र :

1. आनंद मैगजीनल सैंटर केसी रोड, एनएच-5,
2. प्रिंट फोर्ट टेलीफोन एक्सचेंज के सामने नेहरू ग्राउंड,
3. रेलवे बुक स्टाल ओल्ड रेलवे स्टेशन,
4. रैंक, 45 नीलम चौक,
5. एनआईटी रेलवे स्टेशन के बाहर बाटा चौक पुल के नीचे,
6. राम खिलावन बल्लभगढ़ बस अड्डा पुलिस चौकी के सामने,
7. हितेश ग्रोवर सैक्टर 29 पेट्रोल पम्प के पास ।
8. जितेन्द्र, बाटा सैंटर - 9971064207